Airo International Research Journal
ISSN:2320-3714
Volume 22
April 2020

Airo Research Journals
Impact Factor 3.69
A Multidisciplinary Journal

वैदिक साहित्य में योग का स्वरूप

SANTOSH RANI

M.A. Yoga (Net), Dept. of Phy.Education

Chaudhary Ranbir Singh University, Jind

शोध सार

योग एक गूढ एवं जटिल शब्द है । इसका व्यवहार बहुत ही व्यापक अर्थ में किया जाता है और इसका विस्तार व प्रचार भी बहुत है । योग शब्द संस्कृत की 'युज' धातु से बना है जिसका अर्थ है जोड़ना अर्थात किसी वस्तु से अपने को जोड़ना । योग प्राचीन विद्या है जो हमें हमारे वेदों , उपनिषदों , पुराणों से मिली है । योग प्राचीन भारत में मुख्य रूप से विद्यमान था । लेकिन बीच में यह लुप्त हो गया । अब आधुनिक युग में विभिन्न आचार्यों ने प्रचार-प्रसार करके योग के स्वरूप को बढ़ाया । ऐतिहासिक दृष्टि से योग विज्ञान का विकास कई खण्डों में हुआ है, जो प्राचीन उपनिषदों, श्रीमदभगवतगीता तथा पातंजलयोग सूत्र में निहित योग के आधारभूत ज्ञान से लेकर तदन्तर कालीन हिंदू , जैन , बौद्ध , सूफी तथा सिक्ख आदि धर्मों के दार्शनिक विचारकों के माध्यम से विविध रूप में विकसित होता हुआ योग का ज्ञान आधुनिक काल में स्वामी विवेकानंद , श्री अरविन्द , महात्मा गांधी आदि विचारकों के प्रयास के स्वरूप में दिखाई देता है। योग भारतीय दर्शन का सार है । योग की जरूरत आजकल प्रत्येक मनुष्य को है क्योंकि अत्यधिक प्रदूषण के कारण लोगों को श्वास लेना मुश्किल हो रहा हैं । आधुनिक युग के बढ़ते प्रदूषण या प्रकृति के छेड़छाड़ होने के कारण लोगों को योग की बहुत आवश्यकता है । भारत में सुख , समृद्धि , शक्ति और स्वास्थ्य के लिए हर व्यक्ति को योगाभ्यास करना चाहिए । जब से भारत में योग विद्या का ह्रास हुआ तभी से भारतवासी गरीब , दुःखी और अस्वस्थ हैं । पूजा-पाठ , धर्म-कर्म से शांति मिलती है और योगाभ्यास से धन-धान्य , समृद्धि और स्वास्थ्य मिलता है । इस प्रकार उपर्युक्त रिसर्च पेपर को योग का स्वरूप के लिए प्रयुक्त किया जा रहा है।

शब्द :- योग , वेद , दर्शन , चिन्तन , मन , वृत्ति , समाधि , हठयोग , वेदांत , दृष्टा , चित्रवृत्ति , इन्द्रियाँ , आत्मा , परमात्मा ।

Airo International Research Journal
ISSN:2320-3714
Volume 22
April 2020

Airo Research Journals
Impact Factor 3.69
A Multidisciplinary Journal

प्रस्तावना

योग का अर्थ एवं परिभाषा:-

योग शब्द युज धातु से निष्पन्न हुआ है । जिसका अर्थ है जोड़ना । पाणिनि ने योग शब्द ही व्युत्पति 'युजिर योगे' एवं 'युज समाधौ', 'युज-संयमने' इन तीन धातुओं से दी है । युजिर योगे:- जोड़ना, मिलाना, सम करना । जीवात्मा परमात्मा का मिलन योग है । इसी अवस्था को समाधि कहते है । व्यास जी ने ''योगः समाधि'' कहकर समाधि ही कहा है ।

संस्कृत व्याकरण के आधार पर योग:-

(1) युज्यते एतद् इति योग:- चित्त की वह अवस्था जब चित्त की स्मस्त वृतियों में एकाग्रता आ जाए ।

(2) युज्यते अनेक इति योग:- वह साधन है जिससे समस्त चित वृत्तियों मे एकाग्रता लाई जाती है ।

(3) युज्यते तस्मिन् इति योग:- वह साधन है जहां चित्त की वृत्तियों की एकाग्रता उत्पन्न की जाती है ।

(4) युज संयम्ने':- वश में करना/इंद्रियों को वश में करना ।

पाणिनी के धातूपाठ में तीन 'धातु' है । दिवादिगण " युज " धातु का अर्थ है- समाधि । जब मन का प्रगाढ़ संयोग सुषुम्ना के अन्तर्गत ब्रह्मनाडी से होता है, तब पूर्ण समाधि की स्थिति प्राप्त हो जाती है । रूधादिगीय् ' युज ' धातु का अर्थ है- ' युजिर योगे' अर्थात संयोग(जोड़ना) है । 'दुःखरूप' संसार से रहित होने का नाम ही योग है । चुरादिगणीय 'युज' धातु का सम्बन्ध 'वशीकृतस्य मनसः' से है अर्थात मन को वश में करना ही मन का संयम है । यह 'त्रिविध' धातू ही योग शब्द के मूल अर्थ को व्यक्त करती है । योग का अर्थ सभी आचार्यों ने आत्मदर्शन तथा मोक्ष की प्राप्ति ही किया है । वैदिक शास्त्रों में भी आत्मदर्शन तथा ब्रह्म का साक्षात्कार होने की बात बताई गई है। जिस योगी पुरुष ने योग साधना के द्वारा अपनी बुद्धि को सूक्ष्म बना लिया है ऐसा सूक्ष्मदर्शी योग ही उस परम तत्व का सम्यक दर्शन कर पाता है ।

गणित शास्त्र में योग का अर्थ:- गणित के हिसाब से योग का अर्थ जोड़ना, योगफल, जोड प्रयुक्त होता है ।

उपाय अर्थ में योग:- 'अथ तत्वदर्शनाभ्यपायो योगः' उस परम पिता परमात्मा को जानने के लिए जिस ज्ञान का उपाय किया जाता है वही योग है । 'मनुस्मृति' के अनुसार योग का अर्थ:- ध्यान योग से ही आत्मा को जाना जा सकता है, इसलिए ध्यान योगपरायण होना चाहिए ।

पूर्णतया अर्थ में योग:- योग का अर्थ पूर्णता अर्थ में भी होता है अर्थात किसी चीज को उसके ठीक स्वरूप में रखना ।

रहस्यवाद अर्थ में योग:- 'योग' का अर्थ रहस्यवाद सत्य रूप परमात्मा के साथ एकत्व सम्पादन करने की विद्या ही योग है ।

Airo International Research Journal
ISSN:2320-3714
Volume 22
April 2020

Airo Research Journals
Impact Factor 3.69
A Multidisciplinary Journal

रसायन शास्त्र में योग का अर्थ:- विभिन्न पदार्थ को अपना-अपना स्वरूप खोकर एक अद्भुत पदार्थ में होने का नाम ही योग है ।

1.अनुपात नाइट्रोजन

2.अनुपात अमोनिया

3.अनुपात हाइड्रोजन के योग के फलस्वरूप।

इस प्रकार विभिन्न ग्रन्थों में योग को अनेक रूपों में प्रयुक्त किया है । सभी आचार्यों ने योग के अर्थ को लगभग समान रूप से ही प्रयुक्त किया है |

योग की परिभाषाएँ:- वेदों , उपनिषदों , पुराणों इन सभी श्रुति व स्मृति ग्रन्थों में योग की भिन्न-भिन्न परिभाषाएँ दी है । योग किसी दर्शनविशेष का नाम नहीं है यह तो सभी दर्शनों का उपकारक है । सभी दर्शनों में योग का वर्णन स्पष्ट रूप से मिलता है । सभी दर्शन तत्वज्ञान की प्राप्ति श्रवण , मनन और निदिध्यासन के सम्मिलित रूप से ही स्वीकार करते हैं । श्रुति व स्मृति ग्रंथों में जितनी योग की परिभाषाएँ दी गई है । उनसे पतंजलि की परिभाषा का आपतरूप में अलग प्रतीत होती है । लेकिन पूर्णरूप से अध्ययन करने पर यह परिभाषा सारहीन प्रतीत होती है । क्योंकि वृतियों का निरोध किए बिना योग की पूर्णता सम्भव ही नहीं ।

विभिन्न ग्रन्थों में योग की परिभाषाएँ:- सभी ग्रन्थों में विभिन्न आचार्यों ने योग को अलग-अलग परिभाषित किया है जिसका वर्णन इस प्रकार है -

1.'महर्षि पतंजलि' के अनुसार:- चित्त की वृतियों का निरोध करना ही योग है । अर्थात हमारे चित्त में वृत्तियों रुपी जो तरंगे उठती है उनको शान्त करना व उन वृत्तियों का निरोध करना ही योग है ।

2.'गीता के अनुसार':- (i) कर्मों का त्याग करना, आसक्ति त्यागकर कर्म करना, सुव्यवस्थित होकर शान्त व निर्द्वन्द्वतापूर्वक समस्थिति को प्राप्त योग कहते हैं।

(ii) कार्यों को कुशलता पूर्वक करना ही योग है । ईश्वर को समर्पित करके आसक्त भाव से कर्म करना ही योग है । फलासक्ति का त्याग करके कर्म करना ही कर्मकौशल है । कर्म करते हुए यदि कर्ता कर्म में आसक्त हो गया तो यह कर्मों में कर्ता की कुशलता नहीं हुई । यह कर्ता का महा अकौशल हुआ । कर्मयोग का मतलब है अपने कार्य को पूरे तन, मन, धन से तन्मय हो जाना । संपूर्ण सर्म्पण करना ही योग है ।

'योगवसिष्ठ' के अनुसार:- संसार सागर से पार जाने की युक्ति को योग कहते है । अर्थात संसार सागर से पार तभी जाया जा सकता है , जब संसार के वाच्य-वाचक रूप समस्त व्यापारों का निरोध हो जाए । जो मोह-माया के विषय है , उनसे दूर हो जाना

Airo International Research Journal
ISSN:2320-3714
Volume 22
April 2020

Airo Research Journals
Impact Factor 3.69
A Multidisciplinary Journal

ही योग है । अपनी इन्द्रियों, मन , प्राण की एकाग्रावसथा को प्राप्त हो जाना ही संसार सागर से पार होना है । सभी भोग विषयों का त्याग करना , किसी भी मोह-माया में न रहना ही योग है ।

पुराणों के अनुसार:- "लिड पुराण' में महर्षि व्यास ने योग को आत्मा की समस्त विषयों की प्राप्ति होना योग कहा जाता है ।"सभी विषयों को प्राप्त करने का सामर्थ्य योग की एक विभूति है । यह योग का लक्षण नहीं है वृत्तिनिरोध के बिना यह सामर्थ्य प्राप्त नहीं हो सकता । 'अग्नि-पुराण' में कहा गया है कि "योग मन की एक विशिष्ट अवस्था है । जब मन में आत्मा को स्वयं मन को प्रत्यक्ष करने की योग्यता आ जाती है, तब उसका ब्रह्म के साथ संयोग हो जाता है ।" संयोग का अर्थ है कि ब्रह्म की समरूपता उसमें आ जाती है । यह समरूपता की स्थिति ही योग है । 'स्कन्दपुराण' में योग को वैसे ही बताया है जैसे लिडपुराण और अग्निपुराण में परिभाषित किया है । इसमें "जीवात्मा और परमात्मा की समता को समाधि कहा है तथा परमात्मा और आत्मा की अभिन्नता को परम योग कहा है ।" वृतिनिरोध की अवस्था में ही जीवात्मा और परमात्मा की यह समता और अभिन्नता ही योग है । 'देवीभागवतपुराण' में "वृतिनिरोध को ही जीव और परमात्मा की एकता का द्वार माना गया है ।"

उपनिषदों के अनुसार:-

सभी उपनिषदों में योग की अलग-अलग परिभाषाएँ दी गई है:-

(i)'कठोपनिषद' में "पंच इंद्रियाँ, मन व बुद्धि की स्थिर अवस्था योग है ।" अर्थात जब पांचों ज्ञानेन्द्रियों मान के साथ स्थिर हो जाती हैं और मन निश्चल बुद्धि के साथ आ जाता है, मिल जाता है । उस अवस्था को परम गति कहते है । इन्द्रियों की स्थिर धारणा ही योग है । जिसकी इंद्रियाँ स्थिर हो जाती हैं, वह अप्रयत हो जाता है । उसमें शुभ संस्कारों की उत्पत्ति और अशुभ संस्कारों का नाश होने लगता है । यही अवस्था योग है ।

(ii)"मैत्रायण्युपनिषद" प्राण, मन व इन्द्रियों का एक हो जाना एकाग्रावस्था को प्राप्त कर लेना ब्रह्म विषयों से विमुख होकर इंद्रियों का मन में और मन का आत्मा में लग जाना, प्राण का निश्चल हो जाना योग है ।

(iii)"माण्डुक्य कारिका" समाधि चैतन्य की वह अवस्था जब चित्त समस्त वाच्यवाचक रूप व्यापार से रहित होता है, समान चिन्ताएँ जब निरूद्ध रहती हैं, जब चित्र सुप्रशान्त, प्रकाशमय, अचल और अभय होता है वही योग है ।

मनुस्मृति के अनुसार:- "ध्यान योगेन सम्पश्यद्गतिस्यान्तरात्मः" अर्थात ध्यानयोग से भी आत्मा को जाना जा सकता है , इसलिए ध्यान योगपरायण होना चाहिए । ध्यान द्वारा हम अपने आत्मज्ञान को जान सकते हैं , बाहर ढूंढने की जरूरत नहीं है , परमात्मा हमारे अन्दर ही है ।

Airo International Research Journal
ISSN:2320-3714
Volume 22
April 2020

Airo Research Journals
Impact Factor 3.69
A Multidisciplinary Journal

"सांख्य शास्त्र" के अनुसार- "प्रकृति-पुरुष का पृथकत्व स्थापित कर अर्थात दोनों का वियोग करके पुरुष के स्वरूप में स्थित हो जाना योग है ।" सांख्यदर्शन पुरुष और प्रकृति के वियोग को ही योग मानता है । इसमें इन्हीं को जीवात्मा और परमात्मा का संयोग माना गया है ।

'याज्ञवल्क्य' स्मृति के अनुसार:- "जीवात्मा और परमात्मा के समानरूपत्वरूप संयोग का नाम योग है ।" अर्थात आत्मा अपने चित्त को शुद्ध कर सभी सांसारिक बन्धनों को काटकर परमात्मा के सानिध्य में निवास करें । याज्ञवल्क्य के अनुसार आत्मा अज्ञान के कारण परमात्मा को भूलकर संसार चक्र में फँसी हुई है । इस ज्ञान का उदय हो जाता है तो उसका परमात्मा से मिलन हो जाता है , फलस्वरुप उसके सभी दुख समाप्त हो जाते हैं । इसलिए आत्मा व परमात्मा के मिलन को योग कहते हैं ।

'तंत्र योग' के अनुसार:- "एक्यं जीवात्मनो राहुर्योगं योग विशारदाः ।"

हठयोगप्रदीपिका के अनुसार- "जिस प्रकार नमक जल में मिलकर जल की समानता को प्राप्त हो जाता है , उसी प्रकार जब मन वृतिशून्य होकर आत्मा के साथ ऐक्य को प्राप्त कर लेता है तो मन की उस अवस्था का नाम समाधि है । अर्थात जैसे जल में नमक के मिल जाने पर वह जल में एकरूप हो जाता है उसी प्रकार मन भी आत्मा के साथ एक रूप हो जाता है । "योग शब्द समाधि का वाचक है । यह समाधि जीवात्मा एवं परमात्मा की एकता से व सभी संकल्पों के नष्ट होने पर प्राप्त होती है ।" अर्थात जीवात्मा परमात्मा से मिलन के साधक के सभी संकल्प नष्ट हो जाते हैं वही अवस्था समाधि या योग की अवस्था है । सभी ग्रन्थों में योग को बहुत ही सरल रूप से परिभाषित किया है । सभी ने योग की इंद्रियों को ब्रह्म विषयों से हटाकर अन्तर्मन बनाना है ताकि मन संसारसागर से पार होकर जीवात्मा और परमात्मा का मिलन हो और योग को सिद्धि प्राप्त हो ।

योग का उद्गम:-

जब सृष्टि आरम्भ हुई तब मनुष्य ने जन्म लेने के साथ-साथ जीवन में दुखों का अनुभव करके उससे बचने का प्रयास किया । उसी काल में त्रिविध दुखों का निवारण करने के जिन अनेक उपायों का शोध किया, योग की उनमें मुख्य भूमिका है । विश्व के सबसे प्राचीनतम साहित्य वेद में सर्वप्रथम योग का संकेत मिलता है । योग का आरम्भ श्रुति ग्रंथ जो ईश्वर प्रदत्त है वेदों से माना जाता है । वेदों का मुख्य प्रतिपाद्य विषय ब्रह्मज्ञान था, जिसका मुख्य उद्देश्य चित्त शुद्धि के फलस्वरूप व्यक्ति विशेष में ज्ञान ग्रहण करने की योग्यता उत्पन्न करके उसे कर्मकाण्ड से हटाकर परमात्म स्वरुप में स्थित करना है । वेद भारतीय संस्कृति एवं ज्ञान विज्ञान के मूल स्त्रोत हैं । वेद का मुख्य प्रतिपाद्य विषय यह योग विषय व योग विज्ञान ही है । योग परंपरा बहुत ही पुरानी है इसमें कोई शंका नहीं परंतु कितनी प्राचीन है? किसने शुरू की? कब की? इसका उत्तर देना शायद संभव नहीं । प्राचीन साहित्य में इसका उल्लेख जरूर मिलता है । वेद अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि योग सम्बंधी विचारधारा का वर्णन सबसे पहले ऋग्वेद में हुआ है । लेकिन योग का अस्तित्व वेदों की रचना से पहले भी था क्योंकि इस बात के प्रमाण हैं । वह है कि योग की उच्चमवस्था में ही ऋषियों को वेद का ज्ञान प्राप्त हुआ । ऋषियों ने विश्व में निहित सत्य का दर्शन करके उसे ही

Airo International Research Journal
ISSN:2320-3714
Volume 22
April 2020

Airo Research Journals
Impact Factor 3.69
A Multidisciplinary Journal

वैदिक साहित्य मन्त्रों के रूप में प्रकट किया था । तपस्या किए हुए ऋषियों के हृदय में स्वयंभू ब्रह्म आविर्भूत है, इसलिए वे ऋषि कहलाए । इसी कारण से वेद को अपौरूषेय एवं ऋषियों को मन्त्रद्दष्टा कहा गया है । कुछ विद्वान लोगों का मानना है कि योग सैन्धव की देन है , क्योंकि सिंधु घाटी सभ्यता के अवशेषों में विभिन्न मुद्राओं एवं आसनों की आकृतियाँ मिलती हैं । जिससे यह सिद्ध होता है की उन दिनों भी योग के अभ्यास किये जाते रहे होंगे । नाथ परम्परा के योगी आदिनाथ शिव को प्रथम प्रवक्ता माना जाता है । उनके अनुसार भगवान शिव ने सृष्टि के प्रारम्भ में मनुष्यों के कल्याण के लिए इस विद्या का सबसे पहले उपदेश माता पार्वती को दिया था । जिसे वहीं पास के सरोवर के जल में एक मत्स्य सुन रहा था । इसी को शिव ने अपने वरदान से मत्स्येन्द्रनाथ बना दिया था । फिर मत्स्येन्द्रनाथ ने योग के प्रचार-प्रसार को आगे बढ़ाया । उन्होंने अपने शिष्य जो नाथ संप्रदाय के योगी थे गुरु गोरक्षनाथ को योग की संपूर्ण शिक्षा प्रदान की । गुरु गोरक्षनाथ ने योग का प्रचार-प्रसार पूरे भारतवर्ष में किया । सृष्टि के आरम्भ में ये योग ईश्वर ने दिया था- ईश्वर->सूर्य देव-> मनु (मनुष्यों के पिता) -> इक्ष्वाकु (राजा)-> ऋषि परम्परा (गुरु-शिष्य)-> फिर यह लुप्तप्राय हो गया । अब परमेश्वर अर्जुन को बता रहे हैं वही योग है जो श्रीमद्भगवद्गीता में स्पष्ट रूप से दिया गया है । योग का सर्वप्रथम वर्णन श्रुति एवं स्मृति ग्रंथों में है । अतः इन्हीं के आधार पर प्रथम वक्ता का निर्धारण करना होगा याज्ञवल्क्य स्मृति में कहा गया है- "हिरण्यगर्भ योग का प्रथम उपदेष्टा है ।" हिरण्यगर्भ भगवान ने सबसे पहले सनकादिक एवं विवस्वान कि परमात्म साक्षात्कार रूप सनातन योग का उपदेश दिया । सनक, सनातन, सनन्दन, कपिल, वोढू, पंचशिख आदि योग के अनुयायी हुए । महाभारत में इस बात की पुष्टि हुई कि योग के आदि प्रवक्ता हिरण्यगर्भ ही है जबकि सांख्य के प्रवक्ता परम तपस्वी कपिल मुनी कहे जाते है ।

ऋग्वेद में कहा गया है- "हिरण्यगर्भ से पहले सृष्टि का निर्माण हुआ उसी से पृथ्वी , स्वर्ग आदि सभी को धारण किया । अर्थात सर्वप्रथम हिरण्यगर्भ ही उत्पन्न हुए जो सम्पूर्ण विश्व के एकमात्र पति है , जिन्होंने आकाश , स्वर्ग व पृथ्वी को धारण किया है । हिरण्यगर्भ नामक किसी भी ऐतिहासिक पुरुष का कहीं पर भी उल्लेख नहीं प्राप्त किया । हिरण्यगर्भ मनुष्य तो हो नहीं सकते । इसकी पुष्टि वेदों में की गई है । "हिरण्यगर्भो जगदन्तरात्मा" अर्थात हिरण्यगर्भ जगद की आत्मा है । हिरण्यगर्भ परमपिता परमात्मा का ही नाम है । इसलिए योग का उपदेश परमात्मा द्वारा ही दिया गया है यही सत्य है ।

हठप्रदिपिका में कहा गया है- "उन सर्वशक्तिमान आदिनाथ को नमस्कार है जिन्होंने हठयोग-विद्या की शिक्षा दी, जो राजयोग के उच्चतम शिखर पर चढ़ने की इच्छा रखने वाले अभ्यासियों के लिए सिढ़ी के समान है ।" ऐसा माना जाता है कि भगवान शिव ने जिन्हें यहाँ आदिनाथ कहा है सर्वप्रथम अपनी पत्नी पार्वती को हठयोग की शिक्षा दी और कोई हठयोग संबंधी ग्रन्थ शिव-पार्वती संवाद के रूप में ही हैं ।

योग का इतिहास एवं कालखण्ड:-

Airo International Research Journal
ISSN:2320-3714
Volume 22
April 2020

Impact Factor 3.69
A Multidisciplinary Journal

योग का इतिहास एवं काल बहुत पुरातन है । वेदों में योग का वर्णन स्पष्ट रूप से निहित है । वेदों की उत्पत्ति क्रमशः चार ऋषियों के नाम पर हुई जो हैं अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा ।

1.अग्नि-ऋग्वेद

2.वायु-यजुर्वेद

3.आदित्य-सामवेद

4.अंगिरा-अथर्ववेद ।

योग के इतिहास को पांच काल खण्डों में विभाजित किया है ।

योग के कालखण्ड

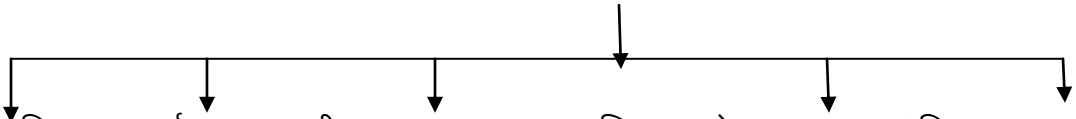

श्रुति काल (0-500BC) दर्शन काल (100AD-1200AD) टीका काल (1200AD-1850AD) भक्ति व हठयोग काल (1850से अब तक) आधुनिक काल (0-500BC) (500BC-100AD)

श्रुति काल (0-500BC) - वेदों से प्रकट होकर महात्मा बुद्ध के काल तक यह सबसे लम्बा काल खण्ड था । श्रुतियों में योग की अनेक परम्पराओं व संकल्पनाओं को उल्लेख मिलते हैं । यजुर्वेद में शरीर को पांच वस्तुओं का तेज बढ़ाने के लिए प्रार्थना की गई है । अथर्ववेद में लोग शरीर के सभी अंगों में वायु, प्राण एकत्रित करके दिव्यलोक को प्राप्त करते हैं ।

ब्रहमदारण्कोपनिषद में:- "प्राण, अपान, व्यान, समान, उदान में सभी प्राणवायु ही है।" छान्दोश्येपनिषद् में भी पाँच वायुओं की व्याख्या की गई है । इस प्रकार श्रुतिकाल में ही योग की संकल्पना सुस्पष्ट है ।

(i) कठोपनिषद् में हृदय से निकलने वाली नाड़ियों की संख्या बताई गई है । उनमें जो नाड़ी ऊपर मस्तिष्क की ओर जाती है उसमें प्राण ले जाता है । वह अमृत तत्व को प्राप्त करता है ।

(ii) दर्शनों का काल- इस काल में भारतीय दर्शन के अनेकों सिद्धान्त सूत्रग्रंथों में एकत्रित किए गए । प्रत्येक दर्शन ने अनेक सिद्धांतों का वर्णन तथा अन्य दर्शनों का खण्डन किया । योगसूत्र के अलावा भगवद्गीता, योगवसिष्ठ, योगियाज्ञवल्क्य आदि की रचना इसी अवधि में मानी जाती है । तन्त्र , पुराण , स्मृतियाँ आदि इसी काल की देन है । जिनमें यंत्र , तंत्र योग के सिद्धांत व आचारों का वर्णन है । इस काल को हम सूत्र-ग्रन्थों व स्मृतियों का काल भी कहते हैं ।

Airo International Research Journal
ISSN:2320-3714
Volume 22
April 2020

Airo Research Journals
Impact Factor 3.69
A Multidisciplinary Journal

(iii) टीकाओं का काल- यह काल लगभग चौथी शताब्दी में शुरू होकर बारहवीं शताब्दी तक जारी रहा । योगसूत्र पर महाभाष्य की रचना चौथी शताब्दी में हुई ऐसा माना जाता है । इसी भाष्य के आधार पर विज्ञान , भिक्षु , भोजदेव , वाचस्पति , मिश्र एवं नागोजी भट्ट ने अपनी टीकाएँ लिखी । यह भारतीय इतिहास का उत्कृष्ट समय था । इसमें विविध विधाओं , कलाओं का विकास हुआ । योग , उपनिषद , भक्ति ग्रंथ , स्त्रोत ग्रंथ , पुराण तंत्र के ग्रंथ व आचार्यों द्वारा अनुसंधान व प्रचार के कार्य भी इसी काल में हुए थे ।

(iv) भक्ति व हठयोग का काल:- 12वीं से 19वीं शताब्दी के अन्त तक । नाथ सम्प्रदाय का प्रचार, शारीरिक क्रियाओं द्वारा मन को वश में करना, यह इस काल में विशेषता थी । हठयोग के ग्रंथ हठयोगप्रदिपिका , घेरण्ड संहिता तथा तंत्र के अनेक ग्रंथों की रचना इस काल के मध्य में हुई । भारत पर इस्लाम व ईसाई अक्रान्ताओं के कारण आश्रमों , संस्थाओं , ग्रंथों तथा परंपराओं का विनाश हुआ । यह भक्ति तथा हठयोग का काल था जिसमें भक्ति व हठयोग के विभिन्न ग्रंथों की रचना हुई ।

(v) आधुनिक काल:- 19वीं शताब्दी में योगाचार्य के रूप में स्वामी दयानन्द सरस्वती का उल्लेख जिन्होंने अमर ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश', 'ऋग्वेदादिभाण्यभूमिका' आदि के माध्यम से योग की गलत धारणाओं का खंडन करके स्पष्ट दिशानिर्देश दिया ।

महर्षि दयानन्द सरस्वती की योग साधना से प्रेरणा लेकर स्वामी विवेकानंद ने योग को आगे बढ़ाया । इन्होंने अपने गुरु रामकृष्ण परमहंस से दीक्षा ली । श्री अरविंद, स्वामी शिवानन्द, कुवल्यानन्द आदि ने परंपराओं को आगे बढ़ाया । स्वामी शिवानन्द के शिष्यों ने विदेशों में योग का प्रचार किया । स्वामी कुवल्यानन्द जी ने वैज्ञानिक तथ्यों एवं तकनीकों के आधार पर योग के प्रायोगिक अंगों का मूल्यांकन किया । कैवल्यधाम नामक संस्था को स्थापित करके योग के कार्य को बढ़ावा दिया । स्वामी सत्यानन्द ने बिहार योग विद्यालय की स्थापना जो अब बिहार योग भारती के नाम से मुंगेर में डीन्ड विश्वविद्यालय है । और अब स्वामी रामदेव, बालकृष्ण जी महाराज । वर्तमान में योग को विश्वविद्यालयों में अध्ययन हेतु यूजीसी ने स्वीकृति दे दी है । योग के अनेकों विश्वविद्यालय हैं जिनमें गुरुकुल कांगड़ी , पतंजलि विश्वविद्यालय , मोरारजीदेसाई आदि प्रमुख हैं । इसलिए आधुनिक काल में योग का महत्व बढ़ता जा रहा है ।

योग के प्रकार:-

योगराज उपनिषद में योग के चार प्रकार माने गए हैं । दत्तात्रेय योगशास्त्र में भी योग के चार ही प्रकारों का वर्णन है- मन्त्रयोग, लययोग, हठयोग तथा राजयोग ।

1.मन्त्रयोग:- मातृकादियुक्त मन्त्र को 12 वर्ष तक विधिपूर्वक जपने से अणिमा आदि सिद्धियाँ साधक को प्राप्त हो जाती हैं ।

2.लययोग:- दैनिक क्रियाओं को करते हुए सदैव ईश्वर का ध्यान करना लययोग कहलाता है ।

Airo International Research Journal
ISSN:2320-3714
Volume 22
April 2020

Airo Research Journals
Impact Factor 3.69
A Multidisciplinary Journal

3.हठयोग:- विभिन्न मुद्राओं, आसनों, प्राणायामों एवं बन्धो के अभ्यास से शरीर को निर्मल एवं मन को एकाग्र करना हठयोग कहलाता है ।

4.राजयोग:- यम-नियमादि के अभ्यास से चित्त को निर्मल कर ज्योतिर्मय आत्मा का साक्षात्कार करना 'राजयोग' कहलाता है । 'राजयोग' शब्द 'राजृ दीप्तौ' धातु से निष्पन्न हुआ है । 'राज' का अर्थ दीप्तिमान, ज्योतिर्मय तथा 'योग' का अर्थ समाधि है ।

गीता में ध्यानयोग, सांख्ययोग एवं कर्मयोग के बारे में विस्तृत विवेचन है । गीता के पंचम अध्याय में सन्यासयोग एवं कर्मयोग में कर्मयोग को श्रेष्ठ माना है । पातञ्जल योगसूत्र में महर्षि पतंजलि ने अष्टांग योग को मुख्यतया लक्षित कर योगसूत्रों में कि इसकी विवेचना की है । यौगिक भेदों के बारे में जब हम शास्त्रों को पढ़ते-सुनते हैं , तब यही निष्कर्ष निकलता है कि आध्यात्मिक साधना के क्षेत्र में जितने भी उपाय या विधियाँ प्रचलित थी उन सबको योग के नाम से ही अभिहित किया जाता था । 'योग सूत्र' में योग के अष्टांगयोग का वर्णन है जिसमें यम , नियम , आसन , प्राणायाम , प्रत्याहार , धारणा , ध्यान , समाधि ये आठ अंग है । घेरण्ड संहिता में योग के सप्त अंगो का वर्णन किया है । सिद्धसिद्धान्त पद्धती में षष्टांग योग का वर्णन है और हठयोगप्रीतिका में चतुर्गयोग का वर्णन है । इस प्रकार हम कह सकते हैं कि योग साहित्य में योग के विभिन्न प्रकार हैं । अलग-अलग ग्रंथों में विभिन्न प्रकारों का वर्णन मिलता है ।

योग का स्वरूप

हमारे वैदिक साहित्य में योग के स्वरूप को प्रस्तुत किया गया है । हमारे श्रुति व स्मृति ग्रन्थों में योग का सरल रूप से वर्णन मिलता है । योग को वेदों, उपनिषदों, पुराणों, गीता तथा हठयोग के ग्रंथों में योग का स्वरूप दिया गया है जिसका वर्णन इस प्रकार है ।

वेदों में योग का स्वरूप:-

वेद भारतीय संस्कृति के सबसे प्राचीन ग्रन्थ है । योग भारतीय जीवन पद्धति का एक अति विशिष्ट अंग है । सृष्टि के प्रारंभ में अग्नि , वायु , आदित्य , और अंगिरा चार ऋषियों को परमात्मा ने वेद ज्ञान प्रदान किया । इन्हीं ऋषियों के नाम से वेदों की उत्पत्ति हुई । वेद संपूर्ण विश्व के ज्ञान-विज्ञान के भंडार हैं । वेदों का मुख्य विषय आध्यात्मिक उन्नति करना है । इसके लिए यज्ञ , उपासना , पूजा व अन्य विधियों का वर्णन किया है । इन सबसे पहले योग साधन करने का विधान किया गया है । ऋग्वेद में कहा गया है:- "विद्वानों का कोई भी कर्म बिना योग के पूर्ण नहीं होता ।" अर्थात जिन देवता (इन्द्र-अग्नि) के बिना प्रकाश पूर्ण ज्ञानी का जीवन यज्ञ भी सफल नहीं होता । इसलिए ज्ञानियों को अपनी बुद्धि और कर्मों का योग करना चाहिए । वेदो में योगभ्यास के द्वारा विवेक ख्याति (समाधि) ईश्वर की कृपा से ही प्राप्त होती है । "ईश्वर की कृपा से हमें योग (समाधि) सिद्ध होकर विवेक ख्याति तथा ऋतंभरा-प्रज्ञा प्राप्त हो और वही ईश्वर अणिमा आदि सिद्धियों सहित हमारे पास आ जाए ।" इसी कारण वेदों में योग सिद्धि के लिए प्रार्थना की गई है । "हम सखा (साधक लोक) प्रत्येक योग (समाधि) में तथा हर कठिन

Airo International Research Journal
ISSN:2320-3714
Volume 22
April 2020

Airo Research Journals
Impact Factor 3.69
A Multidisciplinary Journal

परिस्थिति में परम ऐश्वर्यवान इन्द्र का आहान करते हैं ।" जब साधक साधना करता है और उसमें विघ्न उत्पन्न होते हैं तो उन्हें दूर करने के लिए परमात्मा से प्रार्थना करता है । वेदों के अनुसार अच्छे और बुरे कर्मों का फल उन्हीं के अनुरूप भोगना पड़ता है । देवता भी कर्मफल से छुटकारा नहीं पा सकते, वेदों में स्वतन्त्र इच्छा शक्ति एक मान्यता के रूप में है । मुक्ति , मोक्ष-प्राप्ति का उल्लेख भी वेदों में प्राप्त होता है , जो योग का परम लक्ष्य है । वेदों के उपग्रंथ ब्राह्मण और अरण्यकों में ज्ञान की सभी अवस्थाओं का निरूपण किया है । उनमें पंच ज्ञानेन्द्रियों , पंच कर्मेन्द्रियों , पंच वायु , पंच भूत और मन से बने हुए स्थूल शरीर की धारणा है । ज्ञान प्राप्ति के साधन के रूप में इन्द्रियों के कार्यों का भी विवेचन तथा प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों का विवेचन भी वेदों से प्राप्त है । वेदों में हठयोग के अंगो का वर्णन भी प्राप्त होता है । "आठ चक्रों व नव द्वारों से युक्त हमारी यह देहपूरी एक अपराजेय देव नगरी है । इसमें हिरण्यमय कोश है जो ज्योति और आनन्द से परिपूर्ण है ।"वेदों में शरीर में व्याप्त नाड़ियों और प्राण का उल्लेख मिलता है, ऋग्वेद में प्राण की मेहता को बताने वाले अनेक मंत्र मिलते हैं । इसे इन्द्रियों का रक्षक भी बताया है । वेदों में मंत्रयोग व लययोग का वर्णन भी मिलता है । "अग्नि, जल, पृथ्वी, वायु, आकाश भूतों से बना यह शरीर रूपी रथ है । इसी शरीर रथ के मध्य के नीचे चक्र है । जिनके नाम मूलाधार , मणिपुर , स्वाधिष्ठान है । शिवस्थान सहदल कमल सहित ऊपर के तीन चक्र जिनके नाम अनाहत विशुद्धि और आज्ञा नाम है । हे अविनाशी ! शिवशक्ति, परमपिता आपकी कृपा से लय योग संबंधी ये समस्त ज्ञान मुझे प्राप्त हो । वैदिक योग साधना का ध्येय है आत्मा का परमात्मा के साथ ऐकय । "हे अग्नि देव! यदि मैं तू अर्थात सर्व समृद्धि सम्पन्न हो जाऊँ या तू मैं हो जाए तो मेरे लिये तेरे सभी आशीर्वाद सत्य सिद्ध हो जाऊँ ।"अर्थवेद के एक मंत्र में राजयोग की प्राणायाम प्रणाली से होने वाले शक्ति के आरोहण का वर्णन किया गया है । "पृथ्वी , अन्तरिक्ष और द्यौ क्रमशः अन्न , प्राण और मन की भूमिकाओं के प्रतीक है और स्वर्ज्योति मन से परे स्थित वाङ्मय अगोचर विज्ञानमय भूमिका का प्रतीक है ।" प्राणायाम से सिद्ध साधक कहता है कि मैंने पृथ्वी के तले से अन्तरिक्ष में आरोहण किया । अन्तरिक्ष से धुलोक में और आनन्दमय धुलोक के स्तर से आरोहण करके मैं स्वर्गलोक के ज्योतिर्मय धाम में पहुँच गया । इस प्रकार हम कह सकते हैं कि योग विद्या का वेदों में अति महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है । वेद पूर्ण पुरुष परमेश्वर की कृति है । उसमें आध्यात्मिक आदि दैविक तथा आदिभौतिक तीनों प्रकार के भाव हैं । योग के द्वारा चित्त को एकाग्र करने के पश्चात ही मंत्र दृष्टा ऋषियों ने वैदिक मंत्रों का साक्षात्कार कर उनका वर्णन किया । इसलिए वेदों में योग का वर्णन जगह-जगह पर किया गया है । अतः समस्त वर्णन से स्पष्ट होता है कि वेदों में योग का महत्वपूर्ण स्थान है ।

उपनिषदों में योग का स्वरूप:-

उपनिषद एक श्रुति ग्रन्थ है । आध्यात्मिक ग्रंथों में उपनिषदों का महत्वपूर्ण स्थान है । योग विद्या का उपनिषदों में बहुत अच्छा वर्णन मिलता है । उपनिषदों की संख्या 108 है । 108 उपनिषदों में से 20 उपनिषदों को 'योग उपनिषद' कहा जाता है । जो इस प्रकार हैं:-

1.अद्वयतारकोपनिषद्

Airo International Research Journal
ISSN:2320-3714
Volume 22
April 2020

Airo Research Journals
Impact Factor 3.69
A Multidisciplinary Journal

2.अमृतबिन्दु उपनिषद

3.अमृतनादोपनिषद्

4.मुक्ति उपनिषद्

5.तेजोबिन्दूपनिषद्

6.त्रिशिरवब्राह्मणेपनिषद्

7.दर्शनोपनिषद्

8.ध्यानबिन्दुपनिषद्

9.नादबिन्दुपनिषद्

10.पाशुपत ब्रह्मणोपनिषद्

11.ब्रह्म विद्योपनिषद्

12.मण्डल ब्रह्मणोपनिषद्

13.महावाक्योपनिषद्

14.योगकुण्डल्युपनिषद्

15.योगचूड़ामण्डुपनिषद्

16. शाण्डिल्युपनिषद्

17.हसोनिषद्

18.योगतत्वोपनिषद्

19.योगशिखोपनिषद्

20.योगराजोपनिषद्

Airo International Research Journal
ISSN:2320-3714
Volume 22
April 2020

Airo Research Journals
Impact Factor 3.69
A Multidisciplinary Journal

इन सभी उपनिषदों में चित्त, चक्र, नाड़ी, कुण्डलिनी, इन्द्रियों आदि यम-नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि, मंत्र योग, लययोग, हठ योग, राजयोग, ब्रह्मध्यान योग, प्रणवोपासना, ज्ञान योग तथा चित्त की अवस्थाओं का विस्तृत वर्णन मिलता है । योगपनिषद् में कहा गया है "प्राण और अपन की एकता सतरजरूपी कुण्डलिनी की शक्ति एवं आत्मव का मिलन, सूर्यस्वर व चंद्रस्वर का मिलन एवं जीवात्मा व परमात्मा का मिलन योग है । श्वेताश्वर उपनिषद में योगाभ्यास के लिए उपयुक्त स्थान का वर्णन किया गया है- "योगाभ्यास के लिए समतल सुचि, कंकर पत्थर रहित, आग व बालू से रहित तथा शब्द जलादि का जहाँ व्यवधान न हो । मन को प्रिय लगने वाला स्थान हो, जहाँ आँखों के लिए अनुकूल दृश्य हो वही स्थान योगाभ्यास के लिए उपयुक्त है । ऐसे स्थान पर योगाभ्यास करने से मन शान्त व स्थिर होता है ।" अमृतनादोपनिषद् में योग के अंगो का वर्णन करते हुए कहा गया है- "प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, प्राणायाम तक और समाधि यह षडंग योग कहलाता है ।" उपनिषदों में अपयंग योग का भी वर्णन किया गया है । योगशिखोपनिषद् में योग की विभिन्न पद्धतियों का वर्णन करते हुए कहा है- "मंत्रयोग, लययोग, हठयोग और राजयोग ये चारों जो यथाक्रम चार भूमिकाएँ हैं।" ये चारों ही चतुर्विध योग है । जिसे महायोग कहते हैं । योगतत्वोपनिषद् में कहा है कि "योग के बिना ध्रुव मोक्ष का देने वाला भला कैसे हो सकता है उसी प्रकार ज्ञानहीन योग भी मोक्षकर्म में असमर्थ है । "मोक्ष को प्राप्त करने के लिए योग और ज्ञान दोनों का एक साथ होना जरूरी है । क्योंकि योग के बिन पवित्र व शुद्ध ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो सकती । उपनिषदों में इनके साथ-साथ शरीरस्थ नाड़ियाँ वायु, प्राण और मन सभी का वर्णन प्राप्त होता है । उपनिषदों में पंचकोशो का वर्णन आत्मा के आवरण के रूप में किया है । कठोपनिषद् में योग के महत्व को बताया है- इन्द्रियों की स्थिर धारणा अर्थात इनके संयम को भी योग कहते हैं । इसके साधन को करने वाला साधक प्रमाद रहित हो जाता है और शुभ संस्कारों का उदय होता है । इसमें जीवन के दो मार्ग बताए हैं ।

(i) श्रेय

(ii) प्रेय

श्रेय मार्ग मोक्ष को प्राप्त करने वाला मार्ग है । प्रेय मार्ग सांसारिक मार्ग है जो अविधा तथा भोग का मार्ग है । पुराणों में योग का स्वरूप:- पुराणों को उद्गम प्राचीन काल से माना जाता है । जिसके कई प्रमाण मिलते हैं । पुराणों में योग का अत्यधिक वर्णन मिलता है । अथर्ववेद में कहा गया है कि "ऋक, यजु, साम और अथर्ववेद के साथ ब्रह्मा ने पुराणों का भी आविर्भाव किया।" मत्स्य पुराण में भी कहा गया है कि पुराणों की रचना महर्षि वेद व्यास जी के द्वारा मानी जाती है । पुराणों में कथा वाचन किया जाता है । यहीं से कथा परम्परा प्रचलित हो गई । पुराणों का मुख्य उद्देश्य धार्मिक भावना को जीवित रखना है । पुराणों को 18 भागों में बाँटा गया है ।

(1) शिव पुराण

Airo International Research Journal
ISSN:2320-3714
Volume 22
April 2020

Airo Research Journals
Impact Factor 3.69
A Multidisciplinary Journal

(2) लिंग पुराण

(3) ब्रह्म पुराण

(4) नारद पुराण

(5) गणेश पुराण

(6) गरूड़ पुराण

(7) वामन पुराण

(8) सूर्य पुराण

(9) अग्नि पुराण

(10) स्कन्ध पुराण

(11) मत्स्य पुराण

(12) विष्णु पुराण

(13) पदम पुराण

(14) मार्कण्डेय पुराण

(15) कालिका पुराण

(16) देवी भागवत पुराण

(17) ब्रह्माण्ड पुराण

(18) कामिक पुराण

पुराणों में योग विद्या का विषद वर्णन मिलता है । योग के विषय में शिव पुराण में कहा गया है- "शिव में अपने अन्तरकरण की समस्त वृतियों को निश्चिय रूप से लगा देने का नाम ही योग है और वह पाँच प्रकार का होता है ।

(1) मंत्र योग

Airo International Research Journal
ISSN:2320-3714
Volume 22
April 2020

Airo Research Journals
Impact Factor 3.69
A Multidisciplinary Journal

(2) स्पर्श योग

(3) भाव योग

(4) अभाव योग

(5) महा योग

शिव पुराण में अपयंग योग का वर्णन किया है- "यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि ।" शिव पुराण में योग के विघ्न के बारे में बताया है- "आलस्य, व्याधि, स्थान के संबंध में संशय, चित्त की अस्थिरता, अश्रद्धा की भावना, भ्रांति, दु:ख, मन में बुरे भाव उठना, विषयों में चंचलता ये योग मार्ग के दश विघ्न हैं। "इसी कर्म में अग्नि पुराण के द्वितीय खण्ड में अष्टांग योग का वर्णन मिलता है- "संसार के तपों की मुक्ति के लिए अब मैं अपयंग योग को बतलाता हूँ। उस ब्रह्म को प्रकाश करने वाला ज्ञान होता है। उस ब्रह्म में चित्त की एकाग्रता को ही योग कहा जाता है। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह पाँच यम हैं। इसके बाद आसन, प्राणायाम, धारणा, ध्यान और समाधि का वर्णन किया गया है। नारद पुराण में भी द्वितीय खण्ड में अष्टांग योग का वर्णन मिलता है। इसमें 7 नियमों का वर्णन है। इसमें 30 आसनों का वर्णन किया गया है। प्राणायाम के दो भेद बताए गए हैं- सगर्भ और अगर्भ । इसी प्रकार इसमें प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि का वर्णन भी मिलता है। ब्रह्म पुराण में बताया गया है कि योग का अभ्यास कैसे किया जाए, उसके बाद उसकी विधियों का वर्णन मिलता है। योग करने के स्थान के विषय में कहा गया है। हठ में शीत ऊपणता में और अनिलात्मक दशा में कभी भी योग का अभ्यास नहीं करना चाहिए। जलाशय के समीप जीर्ण ग्रह में, चौराहे में सरीसृपों के निकट, शमशान में भययुक्त स्थान पर योग की साधना नहीं करनी चाहिए। लिंग पुराण में योग "चित्त की वृतियों के निरोध को कहा है और उसकी सिद्धि के लिए आठ साधन बताएँ हैं।" स्कंन्ध पुराण:- स्कंन्ध पुराण के द्वितीय खण्ड में क्रिया योग का वर्णन किया गया है। भगवान वासुदेव की जो पूजन विधि है वही क्रिया योग है। इसी प्रकार अन्य पुराणों में भी योग विद्या कहीं भक्ति, कहीं ज्ञान तो कहीं कर्म योग को प्रमुखता से उपदेक्षित करती है। कई पुराणों में राजयोग व हठयोग के अंगो का विस्तृत वर्णन मिलता है। पुराणों का उद्देश्य भी मनुष्यों को मुमुक्षत्व प्रदान करता ही है

गीता में योग का स्वरूप:- श्रीमद् भगवद्गीता भारतीय ग्रंथों में बहुत ही महत्वपूर्ण ग्रंथों में एक है। गीता का अनुवाद संसार की लगभग सभी भाषाओं में हुआ है। इसलिए गीता संसार का प्रसिद्ध ग्रंथ है। सभी विषयों के साथ-साथ गीता में योग का वर्णन किया है। गीता के प्रत्येक अध्याय के साथ योग शब्द जुड़ा हुआ है। गीता में योग के विषय में प्रत्येक अध्याय में वर्णन हुआ है। द्वितीय अध्याय को 48वें में श्लोक में योग की परिभाषा दी गई है। "समत्वम् योग उच्यते" अर्थात हे अर्जुन! तू कर्मफलों की आसक्ति त्यागकर समबुद्धि होकर कर्म कर क्योंकि जिसका भूतों में समान भाव तथा सिद्धि और असिद्धि में जिसकी बुद्धि समान रहती है, वही योग की अवस्था है। अर्थात् योग साधक का चित्त सुख-दुख, लाभ-हानि, जय पराजय, शीत-उपण, भूख-

Airo International Research Journal
ISSN:2320-3714
Volume 22
April 2020

Airo Research Journals
Impact Factor 3.69
A Multidisciplinary Journal

प्यास में सभी द्वंद्वों में समान रहता है। बुद्धि का संमभाव ही योग है। इसी अध्याय में योग की एक अन्य परिभाषा दी गई है। "योग कर्मसु कौशलम्" बुद्धि से युक्त मनुष्य संसार के सुकृत और दुपकृत दोनों प्रकार के कर्मों में आसक्ति को त्याग देता है। ऐसे ही कर्मों के लिए प्रयत्न करना चाहिए क्योंकि कार्य में ही कुशलता ही योग है। "वह विद्या जिससे दुखों से पूर्णतया छुटकारा मिल जाए, उसे ही प्राप्त करना योग कहलाता है।" श्रीमद्भगवद्गीता भीष्म परर्व का हिस्सा है। इसमें 18 अध्याय है जिसमें 700 श्लोक है। इसमें 'एकेश्वरवाद', कर्मयोग, ज्ञानयोग (सांख्य योग), भक्तियोग का सुंदरता से वर्णन है। इसमें क्षेत्र (देह) क्षेत्रज्ञ (जीवात्मा) का वर्णन है। देह को 36तत्वों + 1जीवात्मा + 1पुरुष माना गया है। जब यह पुरुष प्रकट होता है तो 36 तत्वों वाले क्षेत्र व क्षेत्रज्ञ का भी नाश कर डालता है। मुख्य रूप में गीता को तीन पक्षों में देखा जाता है:

1.कर्मयोग 2.ज्ञानयोग 3.भक्तियोग

इन तीनों में ज्ञानयोग श्रेष्ठ है, फिर भक्ति तथा कर्म योग है। गीता में कहा गया है कि "ज्ञानयोगियों के लिए मैंने सांख्य का वर्णन किया और कर्मयोगियों के लिए मैंने कर्मयोग का वर्णन किया।" इस प्रकार गीता में ज्ञान और कर्मयोग के अतिरिक्त भक्ति योग, मंत्रयोग, ध्यान योग आदि का वर्णन किया गया है। भक्ति योग की प्रशंसा में श्रीकृष्ण कहते है कि जो भक्त सब कुछ मेरे ऊपर छोड़कर हर समय मुझको भजता है उसका मैं सबसे पहले ध्यान रखता हूँ और वह सभी बंधनों से मुक्त हो जाता है। गीता में योगाभ्यास के उपयुक्त स्थान का वर्णन करते हुए कहा है। "पवित्र स्थान में सबसे नीचे वस्त्र, उसके ऊपर मृगचर्म और कुशासन बिछाकर और यह आसन ना ऊँचा हो न नीचा हो। ऐसे आसन पर स्थिर आसन बिछाना चाहिए।" इसी में आगे ध्यान करते समय शरीर की स्थिति का वर्णन करते हुए कहा है, "शरीर, सिर और ग्रीवा को एक सीध में रखते हुए अर्थात शरीर न आगे झुका हुआ है न पीछे झुका हुआ हो। इस प्रकार निश्चल धारणा करता हुआ स्थिर होकर चारों दिशाओं को न देखता हुआ योग साधना करें।" मन और इंद्रियों सहित शरीर को वश में रखने वाला कामना रहित हो, अपरिग्रही बनकर योगी अकेला ही एकांत स्थान में स्थित होकर आत्मा को निरंतर परमात्मा में लगावे। श्रीकृष्ण कहते हैं "अत्यंत वश में किया हुआ चित्त जिस काल में परमात्मा में ही भलीभांति स्थित हो जाता है उस काल में संपूर्ण भोगों से स्पृहारहित पुरूष योग युक्त है।" श्रीकृष्ण कहते हैं कि "जिस प्रकार वायु रहित स्थान में दीप चलायमान नहीं होता, वैसे ही उपमा परमात्मा के ध्यान में लगे हुए योगी के जीते हुए चित्त की कही गई है। योगी की मेहता का वर्णन करते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं कि "योगी तपस्वियों में श्रेष्ठ है। शास्त्र ज्ञानियों से भी श्रेष्ठ है और सकाम कर्म करने वालों से भी योगी श्रेष्ठ है। अतः अर्जुन! तू योगी बना।" भगवान श्रीकृष्ण महान योगी थे उन्होंने सभी के लिए योग का निर्देश दिया। इस प्रकार गीता में योग की महत्ता सिद्ध होती है। जिसके इन महत्वपूर्ण श्लोकों में प्रमाण दिये गए हैं।

पातंजल योग सूत्र में योग का स्वरूप:- यह महर्षि पतंजलि द्वारा रचित योग का प्रमुख ग्रंथ है। उसमें योगदर्शन नाम से ही पता चलता है कि योग का भरपूर वर्णन किया गया है। योगसूत्र में योग को "योगाश्चित्तवृतिनिरोधः" नाम से वर्णित है। अर्थात मन की एकाग्रता से ही चित्त की वृतियों का निरोध होता है। इसमें चित्त की पांच भूमिका का वर्णन किया गया है- क्षिप्ट, मुढ़,

Airo International Research Journal
ISSN:2320-3714
Volume 22
April 2020

Airo Research Journals
Impact Factor 3.69
A Multidisciplinary Journal

विक्षिप्त, एकाग्र, निरुद्ध। पातंजल योग सूत्र में चित्त की पाँच वृतियाँ बताइ हैं। प्रमाण, विपर्पय, विकल्प, निद्रा, स्मृति से चित्त की पाँच वृत्तियाँ है। चित्त की वृत्तियों के उपाय भी बताए हैं, अभ्यास तथा वैराग्य चित्तवृत्तियों के मुख्य उपाय हैं। योगसूत्र में कहा है कि "क्लेश, कर्म, विपाक व आशय से जो मुक्त है वह पुरुष विशेष है।" क्लेशों की संख्या पाँच है। अविधा, अस्मिता, राग,द्वेष व अनिवेश। इसमें अविधा को भी सभी दुखों का कारण माना है। महर्षि पतंजलि ने योगसूत्र में अष्टांग योग का वर्णन किया है। अष्टांगयोग के द्वारा ही वैयक्तिक एवं सामाजिक समरस्ता, शारीरिक स्वास्थ्य, बौद्धिक जागरण, मानसिक शांति एवं आत्मिक आनंद की अनुभूति हो सकती है। अष्टांग योग में "1यम 2नियम 3आसन 4प्राणायाम 5प्रत्याहार 6धारणा 7ध्यान तथा 8समाधि" ये योग के आठ अंग है। इन सब योगांगों का पालन किये बिना कोई भी व्यक्ति योगी नहीं हो सकता यह अष्टांगयोग योगियों के लिए नहीं अपितु संपूर्ण मानव जीवन के लिए है जो सुखी रहना चाहता है। योगदर्शन में आसनों का वर्णन भी किया है। आसनों के विषय में कहा है "स्थिरसुखमासनम्" अर्थात जिस स्थिति में सुखपूर्वक बैठकर आसन कर सके, योग कर सके, वही आसन है। आसनों के बाद प्राणायामों का वर्णन मिलता है। आसन के सिद्ध होने पर "श्वास प्रश्वास की गति को यथाशक्ति नियंत्रित करना प्राणायाम कहलाता है।" इसलिए हम कह सकते हैं कि संपूर्ण योगसूत्र में योग की महत्ता का वर्णन स्पष्ट रूप से किया गया है। योग के स्वरूप को योग दर्शन में भली-भांति दर्शाया है।

निष्कर्ष:-

अतः हम कह सकते हैं कि योग का वर्णन न केवल कुछ ग्रंथों में हैं बल्कि संपूर्ण वैदिक साहित्य में उल्लेखित है आज के मनुष्य को योगिक जीवन जीने के लिए अपने जीवन में योग को अपनाना चाहिए। अगर संपूर्ण मनुष्य जाति योग को अपनाती है तो वह अपने जीवन को सुखमय बना सकते हैं। योग का वर्णन हमारे वेदों, पुराणों, उपनिषदों, गीता, योगसूत्र, योगवसिष्ट, मनुस्मृति, विदान्तों तथा हठयोग के सभी ग्रंथों में विद्यमान हैं। जैसे कि इस रिसर्च पेपर में सभी का वर्णन किया है जिसमें योग का वर्णन है। हमारे श्रुति तथा स्मृति ग्रंथों में योग का परमात्मा तथा जीवात्मा का एक होना ही योग बताया है। सांसारिक भोगों से मुक्ति का रास्ता योग है। प्रतिदिन योग का अभ्यासी सांसारिक अविद्या से मुक्त होकर मोक्ष प्राप्त कर सकता है। जैसा कि योग के प्रत्येक ग्रंथ में बताया गया है कि सभी इंद्रियों व मन को वश में करना योग है। मन को वश में करने से हम योगसाधना कर सकते हैं और प्रेय मार्ग से श्रेय मार्ग को प्राप्त कर सकते हैं। योग करने से अविधारूपी जीवन से छुटकारा मिलता है और हम सुखमय जीवन जीते हैं। अतः निष्कर्ष रूप से हम कह सकते हैं कि योग का स्वरूप प्राचीन काल से सभी ग्रंथों में प्रचलित होता आया है और आज के आधुनिक युग में भी योग का स्वरूप पूर्णरूप से प्रचलित है। आधुनिक युग में बढ़ती महामारियों पर नियंत्रण के लिए योग अतिआवश्यक है। प्रतिदिन योगाभ्यास करने वाला व्यक्ति सभी महामारियों से छुटकारा पा सकता है तथा सुखमय जीवन जी सकता है। उपर्युक्त रिसर्च पेपर में योग के स्वरूप को विस्तार से प्रस्तुत किया है। योग केवल योगी के लिए नहीं है। साधारण सांसारिक प्राणी के लिए भी योग आवश्यक हो गया है। इसलिए "करें योग रहें निरोग।"